P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-9*(Part-2) May- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

मत्स्य क्षेत्र में सन्त चरणदास का साहित्यिक एवं सांस्कृतिक योगदान

नीतू जेवरिया
सहा. आचार्य,
इतिहास विभाग,
बाबू शोभाराम राजकीय कला महाविद्यालय,
अलवर, राजस्थान, भारत

सारांश

प्रस्तुत शोध पत्र में मत्स्य क्षेत्र में समय–समय पर हुये सन्तों की जीवन लीला तथा उनके द्वारा किये गये सामाजिक सुधारों का चित्रण करना है। इस कड़ी में सन्त चरणदास का नाम उल्लेखनीय है जिन्होंने तत्कालीन मत्स्य क्षेत्र में भक्ति परम्परा की अलख जगाई। उन्होंने साधारण बोलचाल की भाषा में उपदेश देकर आम जन के लिए धर्म व ईश्वर प्राप्ति का सरल मार्ग बताया तथा उन्होंने स्त्री–शिक्षा व समानता का संदेश दिया।

मुख्य शब्द : संत, चरणदासी सम्प्रदाय व शिष्य, परम्परा साहित्य।

प्रस्तावना

राजस्थान वीरों की भूमि होने के साथ–साथ संत प्रसूता भूमि भी है। राजस्थान में ही सर्वाधिक संत सम्प्रदायों का प्रवर्तन हुआ। इस भूमि ने न केवल वीर योद्धाओं को जन्म देकर साहित्य के एक काल को जन्म दिया अपितु अनेक संत सम्प्रदायों के प्रवर्तक संतों को भी जन्म दिया है। अतः राजस्थान वीरों के साथ–साथ संतों की भी भूमि है।

राजस्थान का मध्यकालीन धार्मिक और सामाजिक जीवन उस समय संक्रातिकाल से गुजर रहा था। इस्लामी संस्कृति ने पूर्व प्रचलित भारतीय संस्कृति को अनेक दृष्टिकोणों से प्रभावित, पुनर्गठित करने का प्रयास किया था। ऐसे में ईश्वर के साकार, निराकार स्वरूप, मूर्ति पूजा, तीर्थ यात्रा तथा अनेक आडम्बरों पर पुनर्विचार करने की जरूरत महसूस होने लगी थी। ऐसी स्थिति में राजस्थान की भक्ति संस्कृति में यहाँ के सन्त सम्प्रदायों ने अपनी सकारात्मक भूमिका द्वारा इस व्यापक क्षेत्र को एक नई पहचान दी तथा सामाजिक एवं धार्मिक जीवन में गति का संचार किया। समाज को नया जीवन तथा धर्म को नई उपासना पद्वति प्रदान कर नवीन जीवन व्यवस्था को जन्म दिया। समाज के पिछड़े एवं निम्न वर्ग, असहाय, अशिक्षित, स्त्री समुदाय को गौरव का पाठ पढ़ाया।

राजस्थान में भक्ति की नींव

राजस्थान में भी सम्पूर्ण देश के साथ मध्यकाल में जहाँ राजनीतिक एवं सामाजिक परिस्थितियों ने संत परम्परा के उदय के लिए सामान्य आधार प्रस्तुत किया वहीं संत परम्परा को गति देने व जन–जन के हृदय तक पहुँचाने में नाथ पंथ की विशेष भूमिका रही। तेरहवीं शताब्दी के पूर्व ही उत्तर–पश्चिमी राजस्थान में नाथ सन्तों ने निराकार भक्ति और योग साधना का प्रचार–प्रसार प्रारम्भ कर दिया। जिसकी ओर समाज का निम्न वर्ग तुरन्त आकर्षित हो गया। इसी समय उत्तर भारत में जयदेव तथा दक्षिण में ज्ञानदेव, सदना, वेणी आदि संतों ने अपने विचारों को नवीन रूप में प्रस्तुत करना आरम्भ कर दिया था। 14वीं शताब्दी में उत्तर भारत में रामानन्द का पदार्पण हुआ और यहीं से संत परम्परा को अधिकाधिक मान्यता मिलती गई, इसमें रामानन्द के शिष्य कबीर का भी महत्वपूर्ण योगदान रहा। उत्तर भारत में रामानन्द, कबीर, रैदास, नानक तथा दक्षिण में नामदेव ने निर्गुण साधना का प्रचार प्रारम्भ कर दिया था। इसी समय राजस्थान में भी संत सम्प्रदाय का उदय हुआ। रामानन्द ने सन्त धन्ना भगत, संत पीपा को दीक्षित कर राजस्थान में सन्त परम्परा का अंकुरण किया था। इसी समय कृष्ण भक्त मीरा बाई की वाणी ने भी राजस्थान की भूमि को झंकृत कर दिया था।

रामानन्द ने राजस्थान में जिस साधना का बीजारोपण किया था कालान्तर में इन्हीं की प्रेरणा से विश्नोई, जसनाथी, लालदासी, निरंजनी, दादू पंथी, चरणदासी व रामस्नेही संत परम्पराओं का उद्भव व विकास हुआ जिनका समृद्ध साहित्य हिन्दी की अमूल्य निधि है। राजस्थान में प्रसिद्ध कहावत –

सात कोस पे पाणी बदले, कोस–कोस पै वाणी।

यह भी राजस्थान की सांस्कृतिक एकता की अद्भुत मिसाल है। अनेकताओं से समृद्ध प्रदेश जहाँ आध्यात्मिक धरातल भी वैष्णव मत, शैव मत, जैन धर्म की प्रधानता रही हो वहाँ अन्य दूसरे सम्प्रदायों का उद्भव राजस्थान की धार्मिक सहिष्णुता का ही द्योतक है। राजस्थान में संत परम्परा के प्रवर्तन एवं विकास का सामान्य राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, दार्शनिक कारणों के अतिरिक्त यहाँ के संतों ने गुरू गोरखनाथ, व्यास पुत्र शुकदेव, रामानन्द, कबीर आदि को अपना प्रेरणास्त्रोत मानकर संत परम्परा का विकास किया। साथ ही तत्कालीन समाज में उच्च वर्ग द्वारा मंदिरों आदि में निम्न वर्गों के प्रवेश पर लगे प्रतिबन्ध ने भी निराकार साधना की ओर निम्न वर्ग को धकेल दिया। इससे संत परम्परा का प्रसार और सहज हो गया क्योंकि राजस्थान में जितने संत सम्प्रदाय पनपे उनमें से ज्यादातर निम्न वर्णों से ही थे। दूसरा सन्तों के प्रसार का एक कारण यह भी था कि उन्हें तत्कालीन शासकों का आश्रय और सम्मान प्राप्त था। शासकों की सन्तों के प्रति श्रद्धा से प्रेरित हो आम जनता भी उनकी ओर आकर्षित हुई। संत दादू का अकबर महान से सम्पर्क, संत चरणदास जी का जयपुर शासकों से सम्पर्क इस बात की पुष्टि करते है कि उस समाज में राजा और सामन्त वर्ग से संतों को आदर व सम्मान मिलता था जिनसे प्रेरित होकर सामान्य जनता उनकी ओर उन्मुख होती थी।

राज्य की जनसंख्या में निम्न वर्ग की जातियों का बाहुल्य है। संतों ने इन्हीं वर्गों को अपने मत के प्रचार–प्रसार का माध्यम बनाया। जिससे निम्न वर्ग के बहुत से संत समाज में सम्मान पाने लगे, जिनमें नामदेव, छीपा, सदना कसाई, रैदास चमार, धन्ना जाट थे। राजस्थान में जिन दो सम्प्रदायों (विश्नोई और जसनाथी) का सर्वप्रथम उदय हुआ वे दोनों जाट जाति द्वारा प्रवर्तित थे।

मध्यकाल देश में मुस्लिम आक्रमणों का काल था किन्तु इस समय प्रदेश शान्त रहा। जिससे यहाँ संत मत का प्रचार–प्रसार अधिक हुआ। साथ ही यहाँ के संतों ने गृहस्थों को अपने मत में दीक्षित कर वैराग्य की नई परिभाषा प्रस्तुत की। उनके अनुसार अपने गृहस्थ कर्तव्यों का निर्वाह करते हुए भी संत हुआ जा सकता है कबीर, दादू दयाल, लालदास ऐसे ही संत थे। हिन्दू व इस्लाम दोनों धर्मों के सामान्य तत्वों को आधार मानकर चले संत सम्प्रदायों को जन समर्थन सहज ही प्राप्त हो गया और संत सम्प्रदायों ने समाज के उपेक्षित निम्न वर्ग को धर्म–साधना के अवसर प्रदान कर समाज की मुख्यधारा से संयुक्त किया।

संत चरणदास

जन्मकाल के विषय में साक्ष्य मौन है। केवल उनके एक शिष्य रामरूप का मत सर्वाधिक प्रामाणिक माना जाता है। 'गुरू भक्ति प्रकाश' उनकी जीवनी का सबसे प्रामाणिक ग्रंथ है। इस मत की पुष्टि ग्रियर्सन रूपमाधुरी शरण, डॉ. त्रिलोकी नारायण दीक्षित, डॉ. एस. एस. शुक्ल और परशुराम चतुर्वेदी ने भी किया है। रामरूप लगभग 15 वर्ष तक चरणदास जी के निकट सानिध्य में रहे थे। रामरूप ने अपने 'गुरू भक्ति प्रकाश' में उनका जन्म भाद्रपद शुक्ला तृतीय मंगलवार सम्वत् 1760 सात घड़ी दिन चढ़े तुला राशि में जब सूर्यदेव भ्रमण कर रहे थे उस समय मत्स्य प्रदेश के अलवर जिले के ढेहरा गाँव में ढूसर भार्गववंशी पिता मुरलीधर व माता कुंजोदेवी के घर इनका आगमन हुआ था। यही महान आत्मा आगे चलकर सन्त चरणदास के नाम से प्रसिद्ध हुए।

रामरूप से उपर्युक्त मत का समर्थन चरणदास जी कि शिष्या सहजोबाई ने भी किया और दोनों मतों में जन्म समय और सम्वत् की समानता मिलती है। रामरूप और सहजोबाई के मत से सर ग्रियर्सन सहित सभी विद्वान अपनी सहमति प्रकट करते है।

अलवर से तीस कोस दूर ढेहरा नामक स्थान उनका जन्म स्थान सिद्ध हो चुका है। स्वयं चरणदास ने अपने ग्रंथ 'भक्ति सागर' में इसका उल्लेख करते हुए लिखा है कि :–

ढेहरे मेरा जनम नाम रणजीत बखानो।
मुरली को सुत जान जात ढूसर पहचानो।।

उसके प्रिय भक्त शिष्य रामरूप ने भी 'गुरू भक्ति प्रकाश' में इस बात का समर्थन किया है :–

मेवात देश में अलवर पासा, डेरा गांव जू अधिक सुवासा।
ताके निकटै सरिता बहे, जिस की सृष्टि महासुख लहै।।

डॉ. पीताम्बर दत्त बडटवाल, ग्रियर्सन, डॉ. राजकुमार वर्मा, सरस माधुरी शरण, डॉ. एस.एस. शुक्ल तथा परशुराम चतुर्वेदी सहित सभी विद्वान उक्त मतों को प्रामाणिक मानते है।

सन्त चरणदास के पिता श्री मुरलीधर कृष्ण के उपासक थे। कहते हैं कि इन्हीं की तपस्या से प्रसन्न होकर भगवान कृष्ण ने उन्हें दर्शन देकर यह वरदान दिया था कि तुम्हारे घर में मैं स्वयं अपने अंश के रूप में अवतार लूंगा। रणजीत, जो चरणदास के बचपन का नाम था। वे कृष्ण के रूप में जाने जाते थे।

रामरूप शिष्य के 'गुरू भक्ति प्रकाश' में गुरू चरणदास की वंश परम्परा इस प्रकार है – श्री शोभन, चतुर्दास, गिरधरदास, लाहड़दास, जगनदास, प्रागदास, मुरलीधर और रणजीत (चरणदास)।

पिता मुरलीधर सरल स्वभाव, ज्ञानी–ध्यानी और तपस्वी थे। सदैव हरि भक्ति में लीन रहते थे। इन्हीं के अनुरूप इनकी पत्नी कुंजो देवी भी गृहस्थी के साथ–साथ ईश्वर भक्ति में लीन रहती थी। पुत्र रणजीत पर भी माता–पिता का पूर्ण प्रभाव पड़ा। चार वर्ष की अल्पायु में ही रणजीत राम–धुन का स्पष्ट उच्चारण करने लगे थे। एक दिन जब रणजीत भगवत भक्ति में रत थे तो एक बाल योगी के रूप में व्यास पुत्र शुकदेव जी ने उन्हें दर्शन दिया और प्रसाद रूप में मिठाई का एक दोना देते हुए कहा –

भोले बालक तू इस जग में, अति तारणतार कहाएगा।
जो नाम जपेगा नर तेरा, वह यम के द्वारे न जायेगा।।

छः वर्ष की अवस्था में ढेहरा की एक स्कूल में अध्ययन के दौरान गुरू द्वारा प्रताड़ित किये जाने पर अचानक रणजीत के मुँह से यह वाणी निकली –

आल जाल तू कहा पढावे, कृष्ण नाम क्यों न लिखावे।
जो तुम हरि को भक्ति पढ़ाओ,
तो मोकू तुम फेर बुलाओ।।

इस वाणी को सुनकर उनके गुरू स्वयं पढ़ने–पढ़ाने से विरक्त हो गये। एक दिन अचानक रणजीत के पिता मुरलीधर साधना–सील से गायब हो गये। बहुत तलाश करने पर भी जब वे नहीं मिले तो माता कुंजो देवी अपने पुत्र सहित गंगा स्नान का निश्चय कर अपने चचेरे ससुर से आदेश प्राप्त कर दिल्ली की ओर रवाना हो गई। रास्ते में कोटकासिम में कुंजोदेवी ने बालक रणजीत को उसकी बुआ के यहाँ छोड़ दिया। यहीं रणजीत थोड़ा बहुत अक्षर ज्ञान सीख पाये। बुआ के घर में रणजीत ने अपनी लीलाओं द्वारा यह स्पष्ट कर दिया था कि वह कोई साधारण बालक नहीं है, अपितु अवतारी पुरूष है।

उनकी एक और चमत्कारी कथा 'लीला सागर' में मिलती है जब उनके नाना ने कादरबक्श नामक एक मौलवी को उन्हें पढ़ाने के लिए नियुक्त किया। तीन महीने बाद भी मौलवी उन्हें 'अलिफ' 'बे' 'पे' आदि प्रारम्भिक अक्षर नहीं पढ़ा पाए। मौलवी ने जब उनकी परीक्षा ली तो रणजीत ने कुरान की कुछ आयतों का अर्थ उन्हें विस्तार से समझा दिया।

8 वर्ष की आयु में उनके विवाह का प्रयास किया गया, किन्तु रणजीत ने इस सांसारिक बन्धन को अस्वीकार कर दिया। 11 से 16 वर्ष की आयु तक वे निरन्तर एकान्त चिन्तन एवं साधना में लीन रहने लगे। 16 वर्ष की अवस्था आने तक उन्होंने उपदेश देना शुरू कर दिया। अपने गुरू व्यास पुत्र श्री शुकदेव के आदेशानुसार उन्होंने समाज को उपदेशों के जरिये दिशा देना प्रारम्भ किया।

एक दिन भ्रमण के दौरान उन्हें यह आभास हुआ कि उन्हें शुकताल पर जाना चाहिए। गन्तव्य स्थान पर पहुँचकर उन्होंने वहाँ एक तेजमय योगी देखा उन्हीं ने चरणदास को दीक्षा दी। वह योगी कोई और नहीं व्यास पुत्र शुकदेव थे। चरणदास की कुछ यात्राओं का उल्लेख गुरू भक्ति प्रकाश ग्रंथ में मिलता है। इसमें कोटकासिम से दिल्ली की यात्रा तथा गंगा की यात्रा, ब्रज की यात्रा, पानीपत की यात्रा, करनाल की यात्रा तथा शाहजहाँपुर आदि की यात्राएँ भी महत्वपूर्ण यात्राएँ थी। जीवन के अन्तिम चरण में जयपुर यात्रा का भी उल्लेख मिलता है।

चरणदासी सम्प्रदाय

दीक्षा ग्रहण करने के पश्चात् चरणदास ने सम्वत् 1779 में चरणदासी सम्प्रदाय की स्थापना की थी। इसी समय उन्होंने साहित्य–सृजन भी प्रारम्भ कर दिया था। कुछ विद्वानों का मानना है कि सम्वत् 1780 से 1785 के मध्य इन्होंने इस सम्प्रदाय का प्रवर्तन किया था। इस मत की पुष्टि इस बात से भी होती है कि उनके जन्म के 19 वर्ष बाद ही सम्प्रदाय का प्रवर्तन हुआ था। चरणदासी सम्प्रदाय की परम्परा में दो अवधारणाएँ प्रमुख थीं :–

1. बिन्दुकुल परम्परा
2. नादकुल परम्परा

बिन्दुकुल परम्परा में पिता–पुत्र का सम्बन्ध होता था। पुत्र बिन्दुपुत्र कहलाता था, वहीं नादकुल परम्परा में गुरू–शिष्य के रूप में पुत्र को पुनः जन्म देता था और शिष्य नादपुत्र कहलाता था।

चरणदासी सम्प्रदाय में नादकुल परम्परा का अधिक महत्व माना जाता है। यह सम्प्रदाय उत्तरी भारत के अन्य सम्प्रदायों में सर्वाधिक प्रसिद्ध और विस्तृत रहा है।

सन्त चरणदास की मृत्यु के बारे में कहा जाता है कि उन्होंने अपनी मृत्यु की भविष्यवाणी अपने शिष्य रामरूप को बारह वर्ष पूर्व ही कर दी थी और जब दिन निकट आया तो दो दिन पूर्व सम्वत् 1839 में अगहन मास के शुक्ल पक्ष पड़वा के दिन शरीर छोड़ने की भी भविष्यवाणी कर दी थी। निश्चित दिवस को वे पद्मासन लगाकर समाधिस्थ हो गये।

शिष्य परम्परा

इस सम्प्रदाय में शिष्यों की संख्या असंख्य बताई जाती है। परन्तु तत्कालीन सन्त सम्प्रदायों के अनुसार चरणदास के भी 52 शिष्य प्रमुख माने जाते है जिन्होंने 52 स्थानों पर गद्दियाँ स्थापित की। कुछ के अनुसार इनके 108 शिष्य थे।

प्रमुख शिष्यों मे दयाबाई, सहजोबाई, रामरूप, रामसखी, जोगजीत, जुगतानन्द, गुरू छौना आदि प्रमुख शिष्य थे।

साहित्य

राजस्थान की संत परम्परा में चरणदास एवं उनके सम्प्रदाय का साहित्य अन्य सम्प्रदायों की अपेक्षा कहीं अधिक व्यापक है। स्वयं चरणदास के ग्रन्थों के बारे में विद्वान एकमत नहीं है। कुछ लोग उनकी रचनाओं की संख्या 21, कुछ 15 और कुछ 12 ही बताते है। लेकिन विपुल साहित्य के रचयिता ने साहित्य रचना के विषय में कहीं कुछ नहीं लिखा।

'भक्ति सागर' में एक जगह अवश्य एक साक्ष्य मिला है जिसमें उन्होंने लिखा है कि पहले–पहले मैने पाँच हजार वाणियों की रचना की, जिनको गंगाजी में बहा दिया गया। इसके बाद पुनः पाँच हजार वाणियों की रचना कर संत समुदाय को बाँट दिया।

भक्ति सागर से पता चलता है कि उन्होंने 1781 में साहित्य सृजन प्रारम्भ कर दिया था। आचार्य परशुराम चतुर्वेदी के अनुसार उन्होंने 21 ग्रन्थों की रचना की थी। जिनमें से केवल 12 ग्रन्थ ही प्रामाणिक माने जा सकते है। मोतीलाल मेनारिया ने केवल 11 ग्रन्थों को ही प्रामाणिक माना है। सन्त चरणदास की निम्न 21 रचनाएँ सम्प्रदाय में श्रद्धा के साथ देखी जाती हैं :–

1.	ब्रज चरित	2.	दान लीला
3.	अमर लोक वर्णन	4.	योग संदेह सागर
5.	माखचोरी लीला	6.	मटकी लीला
7.	चीरहरण लीला	8.	कालीनाथ लीला
9.	कुरूक्षेत्र लीला	10.	अष्टांग योग
11.	धर्म जहाज	12.	ब्रह्मज्ञान सागर
13.	भक्ति पदार्थ वर्णन	14.	जागरण महात्म्य
15.	भक्ति सागर	16.	श्रीधर ब्राह्मण लीला
17.	ज्ञान सर्वोदय	18.	पंचोपनिषद सार
19.	नासिकेत लीला	20.	मन विकृत करण सार
21.	शबद		

अध्ययन का उद्देश्य

प्रस्तुत शोध पत्र में मत्स्य क्षेत्र में सन्त चरणदास के सामाजिक सांस्कृतिक योगदान से आम जनता को अवगत करवाना है तथा उनकी शिक्षा एवं साहित्य रचना में देन की व्याख्या करना है। सन्त चरणदास ने तत्कालीन निरक्षर समाज में किस प्रकार शिक्षा के महत्व को पहचाना तथा भक्ति द्वारा ईश्वर प्राप्ति को संभव बताया।

निष्कर्ष

इस प्रकार चरणदास मत्स्य क्षेत्र के जन–जन में आदरणीय संत थे। सभी जाति और सम्प्रदायों में सन्त चरणदास को स्मरण किया जाता है। मेवात प्रदेश में साम्प्रदायिक सौहार्द के लिए भी सन्त चरणदास का योगदान अविस्मरणीय है। मेवात क्षेत्र में साहित्य सृजन कर ईश्वर और जगत के रहस्यों को आमजन की भाषा में प्रस्तुत किया, साहित्य के क्षेत्र में उनका उल्लेखनीय योगदान रहा है। राजस्थान की सन्त परम्परा में सन्त चरणदास का नाम अविस्मरणीय है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

उत्तरी भारत की सन्त परम्परा – परशुराम चतुर्वेदी, भारती भण्डार, प्रयाग, वर्ष 1972

भक्ति सागर – सन्त चरणदास, सरस्वती विलास प्रेस, नरसिंहपुर, 1895

सहज प्रकाश – सहजोबाई, हेनरी खलिंग व सुधा जोशी, मोतीलाल बनारसी दास, 2001

राजस्थान का पिंगल साहित्य – डॉ. मोतीलाल मेनारिया, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 2006

गुरू भक्ति प्रकाश – स्वामी रामरूप, संस्करण 1905

लीला सागर – जोगजीत

चरणदासी सम्प्रदाय और साहित्य – डॉ. श्याम सुन्दर शुक्ल, वृन्दावन श्री प्रेमस्वरूप, 1995